© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 7, March-April-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 666-672

तार्किकरक्षा में प्रतिपादित निग्रहस्थान का स्वरूप एवं भेद

सन्दीप कुमार मिश्र
शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

शोध आलेख सार – छल, जाति और निग्रहस्थान जल्प और वितण्डा के अंग है। इसीलिए न्यायसूत्रकार ने जल्प के लक्षण में निग्रहस्थान पद का समावेश किया है। जल्प और वितण्डा का तत्त्वज्ञान संरक्षण रूप प्रयोजन ही उनके अंगभूत छल आदि का प्रयोजन है। अतः इस प्रयोजन के निर्वाहार्थ ही छल आदि के प्रतिपादन को आवश्यक समझकर 'न्यायदर्शन' में एवं तदनुसार 'तार्किकरक्षा' नामक ग्रन्थ में उनको समाविष्ट किया गया है।

मुख्य शब्द– तार्किकरक्षा, निग्रहस्थान, स्वरूप, भेद, न्यायदर्शन, छल, जाति, जल्प, वितण्डा।

न्यायदर्शन में षोडश पदार्थों के तत्त्वज्ञान से ही निःश्रेयस प्राप्ति की बात स्वीकार की गयी है।[1] परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं कि तत्त्वज्ञान के तुरन्त बाद ही निःश्रेयस की प्राप्ति हो जाती है, अपितु तत्त्वज्ञान से मिथ्या ज्ञान नष्ट होता है, मिथ्याज्ञान–नाश से दोष नष्ट होते हैं; दोषापाय से प्रवृत्ति नहीं होती, प्रवृत्ति न होने से जन्म नहीं होता, जन्म न होने से दुःख नहीं होता तथा दुःख के न होने से अपवर्ग स्वतः सिद्ध हो जाता है।[2]

न्यायाभिमत षोडश पदार्थों में प्रमाण तथा प्रमेय के स्वरूप निरूपण के पश्चात् आचार्यपाद गौतम न्यायसूत्र के प्रथम अध्याय के द्वितीय आह्निक में वाद, जल्प, वितण्डा के भेद से तीन प्रकार की कथा का वर्णन करते हैं।''[3] इन तीन प्रकार की कथा में जल्प के स्वरूप निरूपण में 'छल' तथा 'निग्रहस्थान' पद का समावेश आचार्य प्रवर ने किया है।[4] इनमें से 'छल' के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए महर्षि गौतम का कथन है कि– ''प्रतिवादी के अभिमत अर्थ से विरूद्ध कल्पनोपपादन वचनविघात 'छल' कहलाता है।''[5]

इसी प्रकार न्यायसूत्रकार महर्षि गौतम निग्रहस्थान के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि – ''विप्रतिपत्ति या अप्रतिपत्ति 'निग्रहस्थान' कहलाता है।''[6] विपरीत या निन्दित प्रतिपादन 'विप्रतिपत्ति होता है, इस तरह विप्रतिपद्यमान पुरुष वाद में पराजय प्राप्त करता है। पराजय–प्राप्ति ही 'निग्रहस्थान' है।''[7] अप्रतिपत्ति उसे कहते हैं कि वादी आवश्यक विषय में भी आरम्भ न करे अथवा प्रतिवादी द्वारा स्थापित पक्ष का खण्डन या मण्डन न करे।''[8]

तर्कभाषाकार आचार्य केशवमिश्र निग्रहस्थान के स्वरूप को निरूपित करते हुए कहते हैं कि– ''निग्रहस्थान वह है जो पराजय का निमित्त होता है। और वह न्यून, अधिक, अपसिद्धान्त, अर्थान्तर, अप्रतिभा, मतानुज्ञा, विरोध आदि के भेद से अनेक प्रकार का होता है।''[9] वृत्तिकार विश्वनाथ निग्रहस्थान शब्द की व्युत्पत्ति को बताते हुए कहते हैं कि– निग्रहस्य–खलीकारस्य, स्थानं–ज्ञापनं निग्रहस्थानम्। अर्थात् पराजय का ज्ञापन ही निग्रहस्थान है। फलतः निग्रहस्थान पराजय का ज्ञापक हेतु है। जब कोई वादी या प्रतिवादी ऐसी स्थिति में पहुँच जाता है कि उसे पराजित समझा जाने लगे तो उसे निगृहीत या निग्रहस्थान को प्राप्त हुआ कहा जाता है।

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 7, March-April-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 666-672

तार्किकरक्षाकार आचार्य वरदराज प्रवृत्तिनिमित्त के अनुसार निग्रहस्थान का लक्षण करते हुए कहते हैं कि– ''अखण्डित अहंकार से दूसरे के अहंकार का खण्डन करके उसका निग्रह करना 'निग्रहस्थान' कहा जाता है।''[10]

जिस स्थिति में पहुँचने पर जिस बात को कहने पर मनुष्य पराजित समझा जाता है उसका नाम 'निग्रहस्थान' है। इसके 22 भेद हैं– 1. प्रतिज्ञाहानि 2. प्रतिज्ञान्तर 3. प्रतिज्ञाविरोध 4. प्रतिज्ञासंन्यास 5. हेत्वन्तर 6. अर्थान्तर 7. निरर्थक 8. अविज्ञातार्थ 9. अपार्थक 10. अप्राप्तकाल 11. न्यून 12. अधिक 13. पुनरुक्त 14. अननुभाषण 15. अज्ञान 16. अप्रतिभा 17. विक्षेप 18. मतानुज्ञा 19. पर्यनुयोज्योपेक्षण 20. निरनुयोज्यानुयोग 21. अपसिद्धान्त और 22. हेत्वाभास।[11]

अब इन 22 निग्रहस्थानों में प्रत्येक का लक्षण (स्वरूप) निम्नवत् है–

1. **प्रतिज्ञाहानि–** अपने दृष्टान्त में विरोधी दृष्टान्त के धर्म को स्वीकार कर लेना प्रतिज्ञा हानि नामक निग्रहस्थान है।[12] न्यायसूत्र में इसका लक्षण बताते हुए कहा गया कि– ''विरूद्ध दृष्टान्त के धर्म को, अपने दृष्टान्त में स्वीकार कर लेना, प्रतिज्ञाहानि नामक निग्रहस्थान कहलाता है।''[13]
2. **प्रतिज्ञान्तर–** प्रतिज्ञात अर्थ का प्रतिषेध किये जाने पर धर्म के विविध प्रकार से उस प्रतिअर्थ की सिद्धि के लिए निर्देश करना प्रतिज्ञान्तर नामक निग्रहस्थान होता है।[14] न्यायसूत्रकार के शब्दों में– ''वादी के प्रतिज्ञा किये अर्थ का प्रतिवादी के निषेध करने पर, धर्म के विकल्प से उस प्रतिज्ञा के अर्थ को कहना प्रतिज्ञान्तर नामक निग्रहस्थान कहलाता है।''[15]
3. **प्रतिज्ञाविरोध–** प्रतिज्ञा और हेतु परस्पर जहाँ विरूद्ध हों वह प्रतिज्ञाविरोध नामक निग्रहस्थान होता है।[16] न्यायसूत्रकार के अनुसार – ''प्रतिज्ञा और हेतु का परस्पर विरोध होना, प्रतिज्ञा विरोध नामक निग्रहस्थान कहलाता है।[17]
4. **प्रतिज्ञासंन्यास–** स्थापित पक्ष का प्रतिषेध किये जाने पर प्रतिज्ञात अर्थ का त्याग कर देना प्रतिज्ञा संन्यास नामक निग्रहस्थान कहलाता है।[18] न्यायसूत्रकार के शब्दों में – ''अपने पक्ष का व्यभिचारादि दोष से निषेध करने पर, प्रतिज्ञा किये अर्थ को छिपाये (छोड़े) तो, प्रतिज्ञासंन्यास नाम का निग्रहस्थान होता है।''[19]
5. **हेत्वन्तर–** सामान्य रूप से प्रयुक्त हेतु का प्रतिषेध किये जाने पर विशेष हेतु प्रयोग को चाहते हुए अथवा करते हुए, वक्ता का ऐसा कथन हेत्वन्तर नामक निग्रहस्थान कहा जाता है।[20] न्यायसूत्रकार के अनुसार, सामान्यरूप से वादी के कहे हेतु को प्रतिवादी के खण्डन न करने पर हेतु में विशेषण देने की इच्छा करने वाले को 'हेत्वन्तर' नामक निग्रहस्थान कहा जाता है।''[21]
6. **अर्थान्तर–** प्रसंग प्राप्त अर्थ से असम्बद्ध अर्थ का कथन करना अर्थान्तर नामक निग्रहस्थान है।[22] न्यायसूत्र में इसे स्पष्ट करते हुए कहा गया कि– ''प्रस्तुत अर्थ से सम्बन्ध न रखने वाला अर्थ अर्थान्तर नामक निग्रहस्थान होता है।[23]

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 7, March-April-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 666-672

7. **निरर्थक–** वर्णों का क्रम से कथन मात्र करना निरर्थक नामक निग्रहस्थान है।[24] केवल व्यर्थ वर्णों के क्रम को कहने वाला निरर्थक नामक निग्रहस्थान कहलाता है।[25]
8. **अविज्ञातार्थ–** वादी वक्ता के द्वारा तीन बार भी कथित वाक्य को जब सभा और प्रतिवादी के द्वारा समझा नहीं जाता तो उसको अविज्ञातार्थ निग्रहस्थान कहा जाता है।[26] जिस अर्थ को (वाक्य को) वादी ऐसे शब्दों से कहे जो प्रसिद्ध न हो, उनके प्रसिद्ध न होने के कारण से या अति शीघ्र उच्चारण के कारण से या उच्चरित शब्दों के बहुत अर्थ वाचक होने से प्रयोग प्रतीत न होने से तीन बार कहने पर भी वादी का वाक्य किसी सभासद्, विद्वान् और प्रतिवादी को समझ में न आवे अर्थात् वाक्य के अर्थ का ज्ञान न होता हो तो उसे 'अविज्ञातार्थ' नामक निग्रहस्थान कहते हैं।''[27]
9. **अपार्थक–** चर्चा के प्रसंग में जब ऐसे पद या वाक्य बोले जायें जिनका पूर्वापाद के साथ परस्पर कोई अर्थसम्बन्ध प्रतीत न हों ऐसे असम्बद्धार्थ पदों या वाक्यों का प्रयोग अपार्थक निग्रहस्थान होता है।[28] न्यायसूत्रकार के शब्दों में, ''जहाँ अनेक पद या वाक्यों का पूर्व पर, क्रम से अन्वयन हो, अतएव असम्बद्धार्थत्व जाना जाता है, वह समुदाय अर्थ के अपाय (हानि) से अपार्थक नामक निग्रहस्थान कहलाता है।''[29]
10. **अप्राप्तकाल–** प्रतिज्ञा आदि अवयवों का विपर्यास करके कथन करना अप्राप्तकाल नामक निग्रहस्थान कहलाता है।[30] न्यायसूत्र में इसको बताते हुए कहा गया है कि– ''परार्थानुमान में प्रतिज्ञादि अवयवों का अर्थ के अनुसार क्रम अवश्य होता है, किन्तु उनके विपरीत कहने से उनका ज्ञान प्राप्त न होने के कारण अर्थ से सम्बन्ध न बन सकने से अप्राप्तकाल' नामक निग्रहस्थान कहलाता है।[31]
11. **न्यून–** पंच अवयवों में से किसी एक भी अवयव में न्यूनता न्यून नामक निग्रहस्थान होता है।[32] प्रतिज्ञा आदि पाँच अवयवों में से किसी एक अवयव से हीन वाक्य को सभाक्षोभ या किसी कारण से कहना 'न्यून' नामक निग्रहस्थान है।''[33]
12. **अधिक–** हेतु और उदाहरण का जब अधिक प्रयोग कर दिया जाय तो वह अधिक नामक निग्रहस्थान माना जाता है।[34] हेतु और उदाहरण के अधिक होने से अधिक नामक निग्रह स्थान होता है।[35]
13. **पुनरुक्त–** शब्द या अर्थ का पुनः प्रयोग सप्रयोजन होता है। अतः अनुवाद के प्रसंग को छोड़कर अन्य स्थल में शब्द या अर्थ का पुनः प्रयोग करना पुनरुक्त नामक निग्रहस्थान माना जाता है।[36] प्रयोजन सहित पुनरुक्ति रूप अनुवाद को छोड़कर 'शब्द नित्य' है, शब्द नित्य है 'ऐसा दो बार कहना शब्द पुनरुक्त कहलाता है। तथा शब्द अनित्य है, ध्वनिरूप शब्द नाश धर्मवाला है। ऐसा पुनः कहना केवल अर्थ के पुनः कहने के कारण अर्थपुनरुक्त निग्रहस्थान कहलाता है।''[37]
14. **अननुभाषण–** सभा के द्वारा अच्छी तरह समझे गये तथा प्रतिवादी के द्वारा तीन बार कहे गये वाक्य का वादी यदि प्रत्युत्तर नहीं देता तो उसे अननुभाषण नामक निग्रहस्थान माना जाता है।[38] न्यायसूत्रकार के अनुसार, ''सभा अर्थात् सभासद ने जिस अर्थ को जान लिया

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 7, March-April-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 666-672

और वादी ने जिस को तीन बार कह दिया ऐसे जाने और तीन बार कहे हुए को सुनकर भी जो प्रतिवादी कुछ न कहे तो उसको 'अननुभाषण' नामक निग्रहस्थान कहते हैं।''[39]

15. **अज्ञान–** वादी या प्रतिवादी के द्वारा कथित वाक्यार्थ को सभी सभास्थित व्यक्तियों द्वारा अच्छी तरह समझ लिया गया हो तथा इसी अभिप्राय से वादी या प्रतिवादी अपने वाक्यार्थ को तीन बार कह दिया हो फिर भी यदि वादी या प्रतिवादी अपने विरोधी के वाक्यार्थ को नहीं समझ पाता तो वह अज्ञान नामक निग्रहस्थान से निगृहीत माना जाता है।[40] जिस बात को सभासद् ने अच्छी प्रकार जान लिया हो और उसी बात को प्रतिवादी समझाने के लिए वादी से तीन बार कहे। इस पर यदि वादी उस पदार्थ को न समझ कर पराजय को प्राप्त हो, तो उसे अज्ञान नामक निग्रहस्थान कहते हैं।[41]
16. **अप्रतिभा–** उत्तर का न सूझना अप्रतिभा नामक निग्रहस्थान है।[42] न्यायसूत्रकार के शब्दों में– उत्तर देने का ज्ञान न होना, अप्रतिभा नामक निग्रहस्थान कहा जाता है।[43]
17. **विक्षेप–** किसी कार्य के बहाने से चालू कथा का परित्याग कर जाना विक्षेप नामक निग्रहस्थान है। किसी कार्य के करने के बहाने से कथा का भंग करना विक्षेप नामक निग्रहस्थान कहलाता है।
18. **मतानुज्ञा–** अपने पक्ष में दोष स्वीकार करने से विरोधी के पक्ष उसी दोष का प्रदर्शन करना मतानुज्ञा नामक निग्रहस्थान है।[46] अपने पक्ष में, दोष को मानकर दूसरे विरोधी पक्ष में, दोष की आपत्ति देना, मतानुज्ञा (मत को मान लेना) नामक निग्रहस्थान कहलाता है।47
19. **पर्यनुयोज्योपेक्षण–** निग्रहस्थान में आए हुए का निग्रहस्थानप्राप्ति विषयककथन न करना पर्यनुयोज्योपेक्षण निग्रहस्थान है।[48] निग्रहस्थान (पराजय) को प्राप्त हुए का, पराजित न करना पर्यनुयोज्योपेक्षण नामक निग्रहस्थान कहा जाता है।[49]
20. **निरनुयोज्यानुयोग–** अनिग्रह की स्थिति में निग्रहस्थान का अभियोग लगाना निरनुयोज्यानुयोग निग्रहस्थान है।[50] पराजित न होने वाले वादी या प्रतिवादीरूप स्थान में, तुम पराजित हो, ऐसी आपत्ति, पराजित न हुए को देना 'निरनुयोज्यानुयोग' नामक निग्रहस्थान कहलाता है।[51]
21. **अपसिद्धान्त–** सिद्धान्त को स्वीकार करके अनियम से कथा को चलाना अपसिद्धान्त नामक निग्रहस्थान होता है।[52] एक किसी सिद्धान्त को स्वीकार कर, नियम को छोड़ने से साधन तथा दोष दोनों के कथन को अपसिद्धान्त नामक निग्रहस्थान कहते हैं।[53]
22. **हेत्वाभास–** सभी हेत्वाभास जैसे या जिस रूप में वर्णित हैं, उसी रूप में निग्रहस्थान होते हैं।[54] न्यायसूत्रकार के शब्दों में– ''जिस प्रकार न्यायसूत्र में हेत्वाभास वर्णित हैं, वे उसी रूप में निग्रहस्थान भी माने जाते हैं।[55]

इस प्रकार छल, जाति और निग्रहस्थान जल्प और वितण्डा के अंग है। इसीलिए न्यायसूत्रकार ने जल्प के लक्षण में निग्रहस्थान पद का समावेश किया है। अतः जल्प आदि का जो प्रयोजन होगा, वही छल आदि का भी प्रयोजन माना जा सकता है। वह प्रयोजन है– तत्त्वज्ञान का संरक्षण। जैसा कि न्यायसूत्र में भी कहा गयाहै कि– ''तत्त्वज्ञान के संरक्षण हेतु जल्प

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 7, March-April-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 666-672

और वितण्डा कथायें ठीक उसी प्रकार उपादेय हैं, जिस प्रकार सद्योजात बीजांकुर की रक्षा हेतु कंटीली डालों की बाड़ उपादेय होतीहै।[56]

जल्प और वितण्डा का तत्त्वज्ञान संरक्षण रूप प्रयोजन ही उनके अंगभूत छल आदि का प्रयोजन है। अतः इस प्रयोजन के निर्वाहार्थ ही छल आदि के प्रतिपादन को आवश्यक समझकर 'न्यायदर्शन' में एवं तदनुसार 'तार्किकरक्षा' नामक ग्रन्थ में उनको समाविष्ट किया गया है।

सन्दर्भ

1. प्रमाणप्रमेयसंशयप्रयोजनदृष्टान्तसिद्धान्तावयवतर्कनिर्णयवादजल्पवितण्डा हेत्वाभासच्छलजातिनिग्रहस्थानानां तत्त्वज्ञानान्निः श्रेयसाधिगमः।।
—न्यायसूत्र 1/1/1
2. दुःखजन्मप्रवृत्तिदोषमिथ्याज्ञानानामुत्तरोत्तरपाये तदनन्तरापायादपवर्गः।
न्यायसूत्र—1/1/2
3. तिस्त्रः कथा भवन्ति—वादः, जल्पः वितण्डा चेति।—न्यायभाष्य—1/2/1
4. यथोक्तोपपन्नश्छलजातिनिग्रहस्थानसाधनोपालम्भो जल्पः।—न्यायसूत्र 1/2/2
5. वचनविघातोऽर्थविकल्पोपपत्त्या छलम्।—न्यायसूत्र 1/2/10
6. विप्रतिपत्तिरप्रतिपत्तिश्च निगहस्थानम्।——न्यायसूत्र 1/2/19
7. विपरीता कुत्सिता वा प्रतिपत्तिर्विप्रतिपत्तिः। विप्रतिपद्यमानः पराजयं प्रामोति। निग्रहस्थानं खलु पराजयप्राप्तिः।—न्यायभाष्य 1/2/19
8. अप्रतिपत्तिस्त्वारम्भविषयेऽप्यप्रारम्भः = परेण स्थापितं वा न प्रतिषेधति, प्रतिषेधं वा नोद्धरति।—न्यायभाष्य—1/2/19
9. पराजयहेतुः निग्रहस्थानम्। तच्च न्यून—अधिक—अपसिद्धान्त—अर्थान्तर—अप्रतिभा—मतानुज्ञा—विरोध आदिभेदाद् बहुविधमपि।—तर्कभाषा
10. (i) अखण्डिताहंकृतिना पराहंकारखण्डनम्।
निग्रहस्तन्निमित्तस्य निग्रहस्थानतोच्यते।।—तार्किकरक्षा— 3/1
(ii) 'कथायामखण्डिताहंकारेण परस्याहंकारखण्डनमिह पराजयो निग्रह इति।— सारसंग्रह, पृ0 319
11. (i) निग्रहस्थानानिखलुपराजयवस्तु न्यपराधाधिकरणानिप्रायेणप्रतिज्ञावयवाश्रयाणि तत्त्ववादिनमतत्त्ववादिनं चाभिसंप्लवन्ते।—न्यायभाष्य
(ii) प्रतिज्ञाहानिः प्रतिज्ञान्तरं प्रतिज्ञाविरोधः प्रतिज्ञासंन्यासो हेत्वन्तरमर्थान्तरं निरर्थकमविज्ञातार्थमपार्थकमप्राप्तकालं न्यूनमधिकं पुनरुक्तमननुभाषणमज्ञानम— प्रतिभा विक्षेपो मतानुज्ञा पर्यनुयोज्योपेक्षणं निरनुयोज्यानुयोगोऽपसिद्धान्तो हेत्वाभासाश्च निग्रहस्थानानि।—न्यायसूत्र—5/2/1
12. कथायां पंचपक्षादि येन निर्दिष्टमादितः।
तस्य तेनपुनस्त्यागः प्रतिज्ञाहानिरूच्यते।।—तार्किकरक्षा—3/2
13. प्रतिदृष्टान्तधर्माभ्यनुज्ञा स्वदृष्टान्ते प्रतिज्ञाहानिः।—न्यायसूत्र—5/2/2

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 7, March-April-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 666-672

14. (i) अत्र प्रतिज्ञाग्रहणमुक्त मात्रोपलक्षणम् ।
अविशेषितपूर्वोक्ते साध्यांशे दूषिते पुनः ।।—तार्किकरक्षा—3/3
(ii) तद्विशेषणनिक्षेपः प्रतिज्ञान्तरमिष्यते ।
पदयोर्वाक्ययोर्वा य एकवक्तृकयोर्मिथ ।।—वही, 3/4
15. प्रतिज्ञातार्थप्रतिषेधे धर्मविकल्पात्तदर्शनिर्देशः प्रतिज्ञान्तरम् ।—न्यायसूत्र, 5/2/3
16. व्याघातो निग्रहस्थानं स्यात् प्रतिज्ञाविरोधतः ।
स्वयमुक्तापलापेन प्रतिज्ञान्यासनिग्रहः ।।—तार्किकरक्षा—3/5
17. प्रतिज्ञाहेत्वोर्विरोधः प्रतिज्ञाविरोधः ।—न्यायसूत्र, 5/2/4
18. व्याघातो निग्रहस्थानं स्यात् प्रतिज्ञाविरोधतः ।
स्वयमुक्तापलापेन प्रतिज्ञान्यासनिग्रहः ।।—तार्किकरक्षा—3/5
19. पक्षप्रतिषेधे प्रतिज्ञातार्थपनयनं प्रतिज्ञासंन्यासः ।—न्यायसूत्र—5/2/5
20. हेत्वन्तरं साधकांशे दूषिते तद्विशेषणम् ।
प्रकृतानुपयुक्तोक्तिरर्थान्तरमिति स्थितिः ।।—तार्किकरक्षा—3/6
21. अविशेषोक्ते हेतौ प्रतिषिद्धे विशेषमिच्छतो हेत्वन्तरम् ।—न्यायसूत्र, 5/2/6
22. हेत्वन्तरं साधकांशे दूषिते तद्विशेषणम् ।
प्रकतानुपयुक्तोक्तिरर्थान्तरमिति स्थितिः ।।—तार्किकरक्षा—3/6
23. प्रकृतादर्थादप्रतिसम्बद्धार्थमर्थान्तरम् ।—न्यायसूत्र—5/2/7
24. अवाचकप्रयोगे स्यान्निरर्थक समुद्भवः ।
त्रिभंग्यन्तरमुक्तेऽपि प्राश्निकैः प्रतिवादिना ।।—तार्किकरक्षा—3/7
25. वर्णक्रमनिद्र्देशवन्निरर्थकम् ।—न्यायसूत्र—5/2/8
26. त्रिभंग्यन्तरमुक्तेऽपि प्राश्निकैः प्रतिवादिना ।
वाक्यमज्ञायमानार्थमविज्ञातार्थमुच्यते ।।—तार्किकरक्षा—3/8
27. परिषत्प्रतिवादिभ्यां त्रिरभिहितमप्यविज्ञातमविज्ञातार्थम् ।—न्यायसूत्र—5/2/9
28. वाक्यमज्ञायमानार्थमविज्ञातार्थमुच्यते ।
पदजातं वाक्यजातमनन्वितमपार्थकम् ।—तार्किकरक्षा—3/8
29. पौर्वापर्यायोगादप्रतिसम्बद्धार्थमपार्थकम् ।—न्यायसूत्र—5/2/10
30. विवक्षित क्रमं वादवादांगावयवादिकम् ।
विपर्यस्तं वदति चेत् प्राप्तैवाप्राप्तकालता ।।—तार्किकरक्षा—3/9
31. अवयवविपर्यासवचनमप्राप्तकालम् ।—न्यायसूत्र—5/2/11
32. आत्मसिद्धान्तसिद्धेषु वादांगावयवादिषु ।
एकस्यावचने प्राहुरन्यूनं न्यूननिग्रहम् ।।—तार्किकरक्षा—3/10
33. हीनमन्यतमेनाप्यवयवेन न्यूनम् ।—न्यायसूत्र—5/2/12
34. अन्वितस्योपयुक्तस्य पुनरुक्तेतरस्य या ।
कृतकार्य करस्योक्तिरधिकं तत् प्रचक्षते् ।।—तार्किकरक्षा—3/11

© 2018 IJSRSET | Volume 4, Issue 7, March-April-2018
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 666-672

35. हेतूदाहरणाधिकमधिकम् ।—न्यायसूत्र—5 / 2 / 13
36. शब्दादाक्षेपतो वापि प्रतीतस्यैव कीर्तनम् ।
प्रयोजनविनाभूतं पुनरुक्तमिति स्थितिः । ।—तार्किकरक्षा—3 / 12
37. (i) शब्दार्थयोः पुनर्वचनं पुनरुक्तमन्यत्रानुवादात् ।—न्यायसूत्र—5 / 2 / 14
(ii) अर्थादापन्नस्य स्वशब्देन पुनर्वचनम् ।—वही, 5 / 2 / 15
38. ज्ञातार्थ प्राश्निकैर्वाक्यं त्रिरुक्तं नानु भाषते ।
योऽनुवाद्भाव्य स्वमज्ञानं तस्यैवाननुभाषणम् । ।—तार्किकरक्षा—3 / 13
39. विज्ञातस्य परिषदा त्रिरभिहितस्याप्य प्रत्युच्चारणमननुभाषणम् ।—न्यायसूत्र 5 / 2 / 16
40. ज्ञातेऽपि वादिवाक्यार्थे प्राश्निकैस्तत्र चेत् परः ।
स्वाज्ञानमुद्भावयति तदाज्ञानेन निग्रह । ।—तार्किकरक्षा—3 / 14
41. अविज्ञातंचाज्ञानम् ।—न्यायसूत्र—5 / 2 / 17
42. वाद्यूक्तस्यानुदितस्य प्रतिवादी यदोत्तरम् ।
प्रतिपत्तुं न शक्नोति तदास्याप्रतिभा भवेत् । ।—तार्किकरक्षा—3 / 15
43. उत्तरस्याप्रतिपत्तिरप्रतिभा ।—न्यायसूत्र—5 / 2 / 18
44. कथामभ्युपगम्यैव तद्विच्छेदाय कस्यचित् ।
व्याजस्य वचने प्राहुर्विक्षेपं निग्रहम् । ।—तार्किकरक्षा—3 / 16
45. कार्यव्यासङ्गात्कथाविच्छेदो विक्षेपः ।—न्यायसूत्र, 5 / 2 / 19
46. अनिष्टभ्रमतोऽन्येषामिष्टमापादयेद्यदि ।
मतानुज्ञेति तस्य स्यान्निग्रहस्थानमुद्भटम् । ।—तार्किकरक्षा—3 / 17
47. स्वपक्षे दोषाभ्युपगमात् परपक्षे दोषप्रसंगो मतानुज्ञा ।—न्यायसूत्र—5 / 2 / 20
48. अवश्योद्भाव्यमापन्नकालं निग्रहमागतम् ।
अनुद्भावयतः पर्यनुयोज्योपेक्षणं भवेत् । ।—तार्किकरक्षा—3 / 18
49. निग्रहस्थानप्राप्तस्यानिग्रहः पर्यनुयोज्योपेक्षणम् ।—न्यायसूत्र—5 / 2 / 21
50. अतन्निग्रह सम्प्राप्तं तन्निग्रहनिमित्ततः ।
निगृह्णतो निग्रहः स्यादचोद्यस्यानुयोगतः । ।—तार्किकरक्षा—3 / 19
51. अनिग्रहस्थाने निग्रहस्थानाभियोगोनिरनुयोज्यानुयोगः ।—न्यायसूत्र—5 / 2 / 22
52. सिद्धान्तमेकमालम्ब्य तद्विरूद्धपरिग्रहे ।
अपसिद्धान्ततः सिद्धं निग्रहस्थानमक्षयम् ।—तार्किकरक्षा—3 / 22
53. सिद्धान्तमभ्युपेत्यानियमात् कथाप्रसंगोऽपसिद्धान्तः ।—न्यायसूत्र, 5 / 2 / 23
54. हेत्वाभासाः प्रसंख्याता येन रूपेण लक्षिताः ।
तेऽपि तेनैव रूपेण निग्रहस्थानसंज्ञिताः । ।—तार्किकरक्षा, 3 / 23
55. हेत्वाभासाश्च यथोक्ताः ।—न्यायसूत्र—5 / 2 / 24
56. तत्त्वाध्यवसाय संरक्षणार्थं जल्पवितण्डे ।
बीज प्ररोहसंरक्षणार्थं कण्टक शाखा वरणवत् । ।—न्यायसूत्र—4 / 2 / 50